❑ डॉ0 वसुमति डागा

प्रभु महावीर (रेडियो रूपक)

हिंसा से जलती धरती पर, अमृतमेघ बन जो बरसा,
विश्व शांति के महाभगीरथ, महावीर प्रभु की जय हो जय हो।।
मानवता का कल्पवृक्ष बन, नन्दन किया विश्व को जिसने,
पाकर उसकी शरण दिव्यतम, सारी मानव जाति अभय हो।।

वाचक : भारतीय संस्कृति की अनादिकालीन श्रमण परम्परा में भगवान आदिनाथ से लेकर भगवान महावीर तक 24 तीर्थंकरों एवं अनन्तानन्त ऋषियों ने संसार के प्राणिमात्र के लिए धर्म का उपदेश देकर अनन्त शांति को प्राप्त करने का मार्ग बताया। भगवान महावीर ने कहा- ''वत्थु सहावो धम्मो'' वस्तु का जो स्वभाव है वही उसका धर्म है। लेकिन इस संसार के प्राणी अपने इस स्वभाव रूप धर्म को भूलकर चतुर्गत्यात्मक संसार में संक्रमण, परिभ्रमण कर रहे हैं। संसार परिभ्रमण के इस चक्र को हम भगवान महावीर द्वारा उपदिष्ट धर्म का पालन करके रोक सकते हैं और अपनी आत्मा को साक्षात् भगवान बना सकते हैं।

भगवान महावीर ने अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह तथा स्याद्वाद जैसे सिद्धांतों का उपदेश दिया और अपने समय के अधर्मांधकार को दूर कर धर्म का प्रकाश फैलाया।

ढाई हजार वर्ष पूर्व अर्थात् भगवान महावीर के जन्म से पहले के भारत की तत्कालीन दशा बड़ी दयनीय थी। भारत दो राजनैतिक प्रणालियों में बंटा हुआ था। मगध, अंग, बंग, कलिंग, वत्स, अवन्ती और उत्तरी कौशल आदि राजतंत्र प्रणाली द्वारा शासित थे तथा वैशाली में लिच्छवी, कपिलवस्तु में शाक्य, कुशीनारा और मल्ल गणराज्य की जनता गणतंत्र की शासन प्रणाली से शासित थी। राजतंत्र में राजा ईश्वर का अवतार माना जाता था और गणतंत्र में शासक मात्र मानव समझा जाता था।

भगवान महावीर वैशाली गणतंत्र के शासक श्री सिद्धार्थ के पुत्र थे। उनकी माता का नाम त्रिशला था। वैशाली के उपनगर क्षत्रिय कुण्डग्राम की पुण्य भूमि में ईसा पूर्व 599, 30 मार्च, चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को उनका जन्म हुआ था। महावीर जब जीवन के अट्ठाइस वर्ष पूर्ण कर रहे थे तब उनके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया। महावीर में श्रमण होने की भावना जाग उठी। एक ओर उनकी विनम्रता अपने चाचा पार्श्व और बड़े भाई नन्दिवर्धन द्वारा कुछ वर्षों तक घर में रहने के अनुरोध को अस्वीकार न कर सकी तो दूसरी ओर उनका संकल्प गृहवास को स्वीकार न कर सका। इस अर्न्तद्वन्द्व में उन्होंने एक नये मार्ग की खोज की।

महावीर : ''जिसकी वासना नहीं छूटी और जो श्रमण हो गया, वह घर में नहीं है, पर घर से दूर भी नहीं है, वासना से मुक्त होकर घर में रहते हुए भी घर से दूर रहा जा सकता है।''

वाचक : वे परिवार में रहकर भी एकान्त में रहे उन्होंने अस्वाद का विशिष्ट अभ्यास किया। वे मौन और ध्यान में लीन रहे। उन्होंने अनुभव किया- घर में रहते हुए घर से दूर रहा जा सकता है पर यह सामुदायिक मार्ग नहीं है। वह तभी संभव है जब वे घर को छोड़ दें। परिवार वालों से आज्ञा लेकर उन्होंने घर छोड़ दिया। और जनता के समक्ष उन्होंने स्वयं श्रमण की दीक्षा स्वीकार की, उन्होंने संकल्प किया :-

महावीर : 1- आज से विदेह रहूंगा, देह की सुरक्षा नहीं करूंगा। जो भी कष्ट आये उन्हें सहन करूंगा। रोग की चिकित्सा नहीं कराऊंगा। भूख और प्यास की बाधा से अभिभूत नहीं होऊंगा। नींद पर विजय प्राप्त करूंगा।

2- अभय के सधे बिना समता नहीं सध सकती और विदेह के सधे बिना अभय नहीं सध सकता। भय का आदि बिन्दु देह की आसक्ति है। अभय की सिद्धि अनिवार्य है। हिंसा, बैर और अशांति सब देह में होते हैं, विदेह में नहीं।

वाचिका : जब भगवान महावीर कनखल आश्रम के पार्श्ववर्ती देवालय के मंडप में ध्यान कर रहे थे, चण्डकौशिक सर्प ने दृष्टि से विष का विकिरण किया, भगवान पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह सर्प भगवान के पैरों से लिपट बार-बार उन्हें डसने लगा पर उनकी आंखों से निरन्तर अमृत की वर्षा होती रही। उनका मैत्री भाव विष को निर्विष करता रहा। अहिंसा की हिंसा पर विजय हुई। महावीर जैसे-जैसे साधना में आगे बढ़े वैसे-वैसे उनकी चेतना में समता का सूर्य अधिक आलोक देने लगा। सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह सब उस आलोक से आलोकित हो उठे।

महावीर : "अरक्षा ही सबसे बड़ी सुरक्षा है। जो अपने आपको असुरक्षित अनुभव करता है, वह अध्यात्म के मार्ग पर नहीं चल सकता। मुझे किसी सुरक्षा की अपेक्षा नहीं है। स्वतंत्रता और स्वावलम्बन ही मेरी सुरक्षा है।"

वाचक : भगवान महावीर की साधना का मूल मंत्र है समता, न राग और न द्वेष, चेतना की यह अनुभव दशा समता है। उन्होंने लाभ-अलाभ, सुख-दुख, निंदा-स्तुति, मान-अपमान, जीवन-मरण की अनेक घटनाओं की कसौटी पर अपने को परखा और खरे उतरे। उनकी चेतना अनावृत्त हो गई। अभय साधना, समता की साधना सिद्ध हो गई। वह वीतराग की भूमिका में पहुंच केवली हो गये। इन्द्रिय, मन और बुद्धि की उपयोगिता समाप्त हो गई।

वाचिका : साधना काल में भगवान प्राय: मौन, अकर्म और ध्यानस्थ रहे। साधना की सिद्धि होने पर उन्होंने सत्य की व्याख्या की।

ईसा पूर्व छट्ठी शताब्दी सत्य की उपलब्धियों की शताब्दी है। उस शताब्दी में भारतीय क्षितिज पर महावीर और बुद्ध, चीनी क्षितिज पर लाओत्से और कन्फ्यूशियस, यूनानी क्षितिज पर पाइथोगोरस जैसे महान् धर्मवेत्ता सत्य के रहस्यों का उद्घाटन कर रहे थे। बुद्ध ने कहा- "सत्य अव्याकृत है।" लाओत्से ने कहा, "सत्य कहा नहीं जा सकता" महावीर ने कहा, "सत्य नहीं कहा जा सकता। यह जितना वास्तविक है उतना ही वास्तविक यह है कि सत्य कहा जा सकता है। वस्तुजगत में पूर्ण सामंजस्य और सह अस्तित्व है। विरोध की कल्पना हमारी बुद्धि ने की है। उत्पादन और विनाश, जन्म और मौत, शाश्वत और अशाश्वत सब साथ-साथ चलते हैं।"

भगवान महावीर के ज्येष्ठ शिष्य गौतम ने एक बार पूछा :-

गौतम : भन्ते! सत्य क्या है?

महावीर : वह बताया नहीं जा सकता।

गौतम : तो हम उसे कैसे जानें?

महावीर : तुम स्वयं उसे खोजो

गौतम : उसकी खोज कैसे करें?

महावीर : कर्म को छोड़ दो, मन को विकल्पों से मत भरो, मौन रखो। शरीर को स्थिर रखो।

गौतम : भन्ते, तब जीवन कैसे चलेगा?

महावीर : संयत कर्म करो, बोलना आवश्यक हो तो संयम से बोलो, चलना आवश्यक हो तो संयम से चलो, खाना आवश्यक हो तो संयम से खाओ।

गौतम : भन्ते, जब सत्य की खोज का मार्ग बताया जा सकता है तो सत्य क्यों नहीं बताया जा सकता?

महावीर : यह सत्यांश है। मैं सत्य का सापेक्ष प्रतिपादन करता हूं, पूर्ण सत्य नहीं बताया जा सकता। इसलिए मैं कहता हूं कि सत्य नहीं कहा जा सकता। सत्यांश बताया जा सकता है। इसलिए मैं कहता हूं कि सत्य कहा जा सकता है। सत्य अवक्तव्य है और सत्य वक्तव्य है, इन दोनों का सापेक्ष बोध ही सम्यग्ज्ञान है।

गौतम : भन्ते, वक्तव्य सत्य क्या है?

महावीर : अभेद की दृष्टि से अस्तित्व (होना मात्र) सत्य है और भेद की दृष्टि से द्रव्य और पर्याय सत्य है। द्रव्य शाश्वत है, पर्याय अशाश्वत है। शाश्वत और अशाश्वत का समन्वय ही सत्य है।

वाचक : महावीर न सिर्फ दार्शनिक थे और न कोरे धार्मिक। वे दर्शन और धर्म के समन्वयकार थे। उन्होंने सत्य को देखा, फिर चेतना के विकास के लिए अनाचरणीय का संयम और आचरणीय का आचरण किया।

महावीर : "अकेला ज्ञान, अकेला दर्शन (भक्ति) और अकेला पुरुषार्थ (कर्म) मनुष्य को दु:ख मुक्ति की ओर नहीं ले जाता। ज्ञान, दर्शन और आचरण का समन्वय ही उसे दुख मुक्ति की ओर ले जाता है। ...पहले जानो, फिर करो। ज्ञानहीन कर्म और कर्महीन ज्ञान ये दोनों व्यर्थ हो जाते हैं। ज्ञान सत्य का आचरण और आचरित सत्य का ज्ञान ये दोनों एक साथ होकर ही सार्थक होते हैं..."

वाचक : महावीर श्रद्धा को ज्ञान और आचार का सेतु समझते थे।

महावीर : जिसको ज्ञान हो जाये उसके प्रति श्रद्धा करनी चाहिए, श्रद्धा अज्ञान का संरक्षण नहीं करती, वह ज्ञान को आचरण तक ले जाती है। ज्ञान दुर्लभ है और श्रद्धा उससे भी दुर्लभ और आचरण उससे भी दुर्लभ। ज्ञान के परिपक्व होने पर श्रद्धा सुलभ होती है और श्रद्धा के सुलभ होने पर आचरण सुलभ होता है।

वाचिका : उन्होंने बताया कि ज्ञान का मूल स्रोत मनुष्य है। आत्मा से भिन्न कोई परमात्मा नहीं है। उनके दर्शन में स्वत: प्रामाण्य शास्त्र का नहीं है, मनुष्य का है। वीतराग मनुष्य प्रमाण होता है और अन्तिम प्रमाण उसकी वीतराग दशा है।

वाचक : वे अनेकात्मवादी थे। भगवान के अनुसार आत्माएं अनन्त हैं। प्रत्येक आत्मा दूसरी आत्मा से स्वतंत्र है। सब आत्माओं में चैतन्य है पर वह सामुदायिक नहीं है। जैसे आत्माएं अनेक हैं वैसे ही योनियां भी अनेक हैं। उस काल में मनुष्य ब्राह्मण, क्षत्रिय,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैश्य और शुद्र इन चार वर्णों में बंटा हुआ था। कर्म संस्कार ही इसके आधार थे। वर्ग के अहंकार ने उच्चता और नीचता की दीवार खड़ी कर दी और जन्मजात जाति का प्रचलन हो गया।

महावीर : जब वस्तु जगत में समन्वय और सहअस्तित्व है तो फिर मानव जगत में समन्वय और सह-अस्तित्व क्यों नहीं। सब जीवों के साथ मैत्री करो। उसका एक ही सूत्र है सहिष्णुता, भेद के पीछे छिपे अभेद को मत भूलो। तुम जिसे शत्रु मानते हो उसे भी सहन करो और जिसे मित्र मानते हो उसे भी सहन करो। मैं सब जीवों को सहन करता हूं।
वे सब मुझे सहन करें।
मेरी सबके प्रति मैत्री है।
किसी के प्रति मेरा वैर नहीं है।
अहंकार छोड़ो - यथार्थ को देखो।
अनेकता एकता से पृथक नहीं है। और यही सह-अस्तित्व का मूल आधार है।

वाचक : भगवान महावीर ने तत्व धर्म और व्यवहार के जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया और जनमानस को आन्दोलित किया, वह आज भी उतने ही खरे हैं जितने ढाई हजार वर्ष पूर्व थे। उन्होंने कहा-

* सत्य अनन्त धर्मा है। एक दृष्टिकोण से एक धर्म को देखकर शेष अदृष्ट धर्मों का खंडन मत करो।
* सत्य की सापेक्ष व्याख्या करो। अपने विचार का आग्रह मत करो, दूसरों के विचारों को समझने का प्रयत्न करो।
* राग-द्वेष से मुक्त होना अहिंसा है। समानता का भाव सामुदायिक जीवन में विकसित होता है तभी अहिंसक क्रान्ति सम्भव है।
* उन्होंने कहा- किसी का वध मत करो।
  किसी के साथ वैर मत करो।
  सबके साथ मैत्री करो।
  दास बनाना हिंसा है इसलिए किसी को दास मत बनाओ।
  पुरुष स्त्रियों को और शासक शासितों को पराधीन न समझें, इसलिए दूसरों की स्वाधीनता का अपहरण मत करो।
* ऊंच-नीच का विचार ही नहीं रखना चाहिए। न कोई जाति ऊंची है और न कोई नीची। जाति व्यवस्था परिवर्तनशील है, काल्पनिक है। इसे शाश्वत बनाकर हिंसा को प्रोत्साहन मत दो, सब जातियों को अपने संघ में सम्मिलित करो।
* स्वर्ग मनुष्य का उद्देश्य नहीं है, उसका उद्देश्य है परम शांति, निर्वाण।
* युद्ध हिंसा है, वैर से वैर बढ़ता है, उससे समस्या का समाधान नहीं होता।
* अपने शरीर और परिवार के प्रति होने वाले ममत्व को कम करो।
* उपयोग की वस्तुओं का संयम करो।
* विस्तारवादी नीति मत अपनाओ।
* दूसरों के स्वत्व पर अधिकार करने के लिए आक्रमण मत करो।
* मनुष्य अपने सुख-दुख का कर्त्ता स्वयं है। अपने भाग्य का विधाता भी वह स्वयं है।
* राजा ईश्वरीय अवतार नहीं है, वह मनुष्य है।
* कोई भी ग्रन्थ ईश्वरीय नहीं है, वह मनुष्य की कृति है।
* भाग्य मनुष्य को नहीं बनाता, वह अपने पुरुषार्थ से भाग्य को बदल सकता है।
* असंविभागी को मोक्ष नहीं मिलता, इसलिए संविभाग करो, दूसरों के हिस्से पर अधिकार मत करो।
* अनाश्रितों को आश्रय दो।
* शिक्षा देने के लिए सदा तत्पर रहो।
* रोगियों की सेवा करो।
* कलह होने पर किसी का पक्ष लिए बिना शान्त करने का प्रयत्न करो।
* धर्म सर्वाधिक कल्याणकारी है, किन्तु वही धर्म जिसका स्वरूप अहिंसा, संयम और तप है।
* विषय वासना, धन और सत्ता से जुड़ा हुआ धर्म, सांहारिक विष की तरह है।
* धर्म के नाम पर हिंसा अधर्म है।
* चरित्रहीन व्यक्ति को सम्प्रदाय और वेश त्राण नहीं देते, धर्म और धर्म-संस्था एक नहीं है।
* भाषा का पांडित्य और विद्याओं का अनुशासन ही मन को शांत नहीं करता। मन की शांति का एक मात्र साधन है धर्म।

महान् शांति-दूत, अहिंसा के पुजारी और समता के अवतार भगवान महावीर का ईसवी पूर्व 527 में निर्वाण हुआ। धर्म, ज्ञान, समता और अहिंसा की जो ज्योति उन्होंने जगाई, वह आज ढाई हजार वर्ष बाद भी अपने प्रकाश से सारे संसार का मार्गदर्शन कर रही है... अगर हम सब उनके दिखाये रास्ते पर चलें तो संसार में फैले अंधकार को दूर कर सकते हैं।

जाति पांति की चिर कटुता के, तम को जिसने दूर भगाया।
समता का शुभ पाठ पढ़ाकर, जिसने सबको गले लगाया।।

तप संयम से देह मुक्ति का, किया प्रकाशित जिसने पथ है।
मनुज मात्र के धर्म केतु की, दिशा दिशा में सदा विजय हो।।

मन का कल्मष धोकर जिसने, दया क्षमा की ज्योति जगायी।
विष की बेल काटकर जिसने, अमृत की लतिका लहराई।
अंधकार को दूर भगा कर, जिसने सबको दिया उजाला।
विश्व गगन के महासूर्य की, धर्म कीर्ति-निधि नित अक्षय हो।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org